डोगरी भाषा से हिन्दी में अनुवाद : चुनौतियां और समाधान

❐ डॉ. सत्यापल श्रीवत्स

अनुवाद साहित्य की एक बड़ी सशक्त तथा जीवंत विधा मानी जाती है और यदि इसे एक कला का नाम भी दें तो भी अत्युक्ति नहीं होगी। वास्तव में यह एक ऐसी विधा है जिसके माध्यम से सम्बद्ध भाषाएं एक दूसरी के समीप आने के साथ-साथ एक दूसरी के साहित्य को समृद्ध करने में सहायता भी करती हैं। विशेष कर समृद्ध भाषाओं की अनूदित रचनाएं प्रगतिशील एवं छोटी भाषाओं के साहित्यिक भण्डार को बढ़ाने में बड़ी सहायता करती हैं। इसके अतिरिक्त अनुवाद के द्वारा सम्बद्ध देश एक दूसरे की संस्कृति का धार्मिक, सामाजिक तथा राजनतिक सभी प्रकार की गतिविधियों को समझने में सक्षम होते हैं। अत: हम कह सकते हैं कि अनुवाद स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा को परस्पर समीप लाने के लिए सेतु की भूमिका निभाती है। परन्तु यहां यह भी विचारणीय तथ्य है कि अनुवाद एक चुनौती भरा काम होने के कारण एक कठिन काम भी है, क्योंकि जब तक अनुवादक को स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा का पूर्ण ज्ञान न हो तब तक सही अनुवाद होने की सम्भावना नहीं की जा सकती। कई बार स्रोत भाषा में ऐसे शब्द होते हैं जिसकी उपज स्रोत भाषा की धरती होती है। जिनका लक्ष्य भाषा में उन्हीं के अनुरूप स्थानापन्न शब्द मिलने अति कठिन हो जाते हैं। ऐसी अवस्था में अनुवादक के सामने अति संकटान्न स्थिति आ जाती है परन्तु तब उसे स्रोत भाषा के उन शब्दों के साथ मेल करने वाले तथा अर्थ के साथ भी संगति करने वाले लक्ष्य भाषा के शब्दों का सहारा लेकर ही अपना काम चलाना पड़ जाता है। जब हम अनुवाद विधा के बारे में विचार करते हैं तो हमें अनुवाद के पांच प्रकार मिलते हैं। जिनका विवरण इस प्रकार है-

1. अनुवाद से अनुवाद –

यह ऐसा अनुवाद है जो स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा तक किसी अन्य (अर्थात् तीसरी भाषा) भाषा के माध्यम से पहुंचता है। जैसे-कोई अंग्रेजी या बंगला आदि भाषा की रचना पहले हिन्दी में अनूदित की जाएगी और फिर डोगरी में या पंजाबी आदि में की जाएगी। वस्तुत: यह अनुवाद शुद्ध या स्तरीय अनुवाद इसलिए नहीं माना जा सकता, क्योंकि वह अनूदित रचना स्रोत भाषा की सारी विशेषताएं तथा प्रभाव लेकर डोगरी में नहीं पहुंच सकेगी। उसमें हिन्दी भाषा के स्वभाव आदि का मिश्रण अवश्य रहेगा। इस श्रेणी में डोगरी में बंगला, उड़िया आदि की सभी तथा कई अंग्रेजी की रचना भी गिनाई जा सकती हैं।

2. वह अनुवाद जिसकी स्रोत भाषा की रचना का रचनाकार भी स्वयं हो और लक्ष्य भाषा में उसका अनुवाद करने वाला अनुवादक भी स्वयं हो। ऐसा अनुवाद शुद्ध तथा स्तरीय अनुवाद इसलिए कहा जा सकता है कि ऐसे अनुवाद के अनुवादक के हृदय में यह भावना गम्भीर रूप से विद्यमान रहती है कि उसका अनुवाद मूल रचना अर्थात् स्रोत भाषा की रचना के शत-प्रतिशत अनुकूल रहकर लक्ष्य भाषा में उतर आए। सारांशतः ऐसे अनुवाद में पूर्ण रूप से दयानतदारी रहती है।

3. इस प्रकार के अनुवाद को हम अक्षरानुवाद या शब्दानुवाद कह सकते हैं। परन्तु इस अनुवाद प्रक्रिया को अपनाने वाला अनुवादक केवल स्रोत भाषा के अक्षरों एवं शब्दों को लक्ष्य भाषा में परिवर्तित करके अपने कार्य की इति श्री कर देता है। इसलिए ऐसा अनुवाद आकर्षक नहीं होता है। पाठक को ऐसी अनूदित रचना से वोरियत के सिवाय कुछ प्राप्त नहीं होता है।

4. अनुवाद का चौथा प्रकार वह है, जिसे अनुवादक-अपनाता हुआ स्रोत भाषा की मूल भावना की या उसके शब्दों की अपनी कल्पना की सहायता से इतनी विस्तृत व्याख्या कर डालता है, कि ऐसा प्रतीत होता है कि मानो स्रोत भाषा का कहीं अस्तित्व नहीं रह गया हो अर्थात् स्रोत भाषा में अभिव्यक्त अर्थ-सन्देश तथा भाव आदि लक्ष्य भाषा में की गई विस्तृत व्याख्या में कहीं दब गए हैं।

5. पांचवें प्रकार का वह अनुवाद है जिसे अपनाकर अनुवादक स्रोत भाषा में अभिव्यक्त हर प्रकार की अर्थ, भाषा, सन्देश तथा अनुशासन की सारी मर्यादाओं को ध्यान में रखकर उन्हें लक्ष्य भाषा में बड़े संयम एवं अनुशासन के साथ उतार कर पूरे सन्तुलन को बनाए रखता है। वास्तव में यही सही अनुवाद होता है। ऐसा अनुवाद ही स्रोत भाषा की रचना में अभिव्यक्त सारी विषयगत सामग्री को लक्ष्य भाषा में उतार कर अपने आप को एक मर्यादित और अनुशासित अनुवादक होने का दावा कर सकता है। ऐसा अनुवादक केवल स्रोत-भाषा के व्याकरणिक ढांचे को लक्ष्य भाषा के व्याकरणिक स्वभाव में परिवर्तित करता है। शेष सभी कुछ स्रोत भाषा का रहता है। ऐसे अनुवाद को हम एक आदर्श अनुवाद भी कह सकते हैं।

यह सर्वविदित है कि संस्कृत भाषा सर विलियम जोन्स द्वारा कालिदास के शकुन्तला नाटक के अनूदित स्वरूप के माध्यम से ही विदेशों में पहुंची, जिससे विदेशों में मेक्समूलर से लेकर अनेक विद्वानों की एक परम्परा ही चल पड़ी। स्वयं मैक्समूलर ने ऋग्वेद तथा उत्तर वैदिक साहित्य के श्रेष्ठ अनुवाद किए। विदेशों में आज भी संस्कृत के अध्ययन-अध्यापन और शोध की परम्परा चल रही है। उन देशों के कई विद्वानों ने संस्कृत ग्रन्थों के गम्भीर अध्ययन एवं अनुसन्धान करके अनेक स्तरीय एवं प्रशंसनीय रचनाएं निर्मित कीं।

इसी प्रकार अरबी, परशियन, उर्दू, हिन्दी, बंगला आदि अनेक विद्वानों ने श्रेष्ठ अनुवाद करके अपनी-अपनी भाषाओं के साहित्यिक भण्डार समृद्ध करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है और आज भी विद्वान सराहनीय कार्य कर रहे हैं, विशेष कर बाइबल, कुरान शरीफ, श्री मद्

भागवद्गीता, बाल्मीकि एवं तुलसी कृत रामचरित मानस तथा कई उपनिषदों के अंग्रेज़ी, हिन्दी, बंगला, तमिल, मराठी आदि भाषाओं में अनुवाद होने से धार्मिक विचारों वाले लोगों को बड़ा लाभ हुआ है।

इस सन्दर्भ में जब हम डोगरी की बात करते हैं तो हम यह सोचने के लिए विवश हो जाते हैं कि 13वीं शताब्दी जब अमीर खुसरो जैसे सर्व भाषा विद्वान भारत की समृद्ध भाषाओं के साथ डोगरी का भी ज़िकर करते हैं तो इसकी प्राचीनता तो स्वतः सिद्ध हो जाती है। परन्तु इसमें साहित्यिक रचना के नाम से केवल लगभग अठाहरवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में होने वाले ब्रजभाषा के जब देवीदत्त (दत्तू नाम से प्रसिद्ध) के डोगरी के केवल दो पद्य मिलते हैं और उनके बाद भी महाराजा रणवीर सिंह के राज्यकाल (1856-1885 ई०) तक जो भी कवि हुए सभी अधिकतर ब्रजभाषा में ही कविता रचते थे, डोगरी में उनमें से भी किसी-किसी ने डोगरी के एक-एक या दो-दो पद्य ही रचे थे। हां, महाराज रणवीर सिंह के राज्य काल में डोगरी भाषा और लिपि का सुधार और इसे राज भाषा का दर्जा देकर इसके उत्थान के लिए जो प्रशंसनीय कार्य किए गए वे डोगरी के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य हैं। उनके राज्य काल में ज्योतिषी विश्वेश्वर ने संस्कृत में रचित गणित पुस्तक लीलावती का डोगरी में अनुवाद किया था तथा और भी कुछ रचनाएं डोगरी लिपि में लिखी गईं मूल भाषा वही रही।

फिर हम जब और आगे बढ़ते हैं तो 1935 ई० में आकर देखते हैं कि स्व. विश्वनाथ खजूरिया राम नगर के मिडिल स्कूल में अपनी नौकरी अवधि में एक 'अछूत' नामक नाटक रचा। वहीं स्व० रघुनाथ सिंह सम्याल तथा हेमराज जंडयाल की सहायता से उसका मंचन भी करवाया तो समझा गया कि वह एकांकी ही डोगरी साहित्य की पहली सृजनात्मकृति थी। उसके बाद क्रमशः दीनूभाई पन्त द्वारा रचित 'गुत्तलूं' और भगवत् प्रसाद द्वारा रचित 'पैहला फुल्ल' शीर्षक से कहानी संग्रह छप कर सामने आए। फिर 1944-45 ई० में जब डोगरी संस्था की स्थापना हुई तो बाकायदा सृजनात्मक साहित्य रचना को प्रोत्साहन मिलने के कारण धीरे-धीरे प्रत्येक विधा का साहित्य सामने आने लगा। परन्तु इतनी शीघ्र यह स्थिति आने वाली नहीं थी कि नवागत डोगरी रचनाओं के हिन्दी में अनुवाद भी होने लग पड़ते। इस विषय में यह भी कह सकते हैं कि जो नई रचनाएं डोगरी की थीं, हो सकता है कि तत्कालीन प्रबुद्ध लेखक उन्हें हिन्दी में करने के योग्य ही न समझते हों, हां! इतना अवश्य हुआ कि संस्कृत, हिन्दी, बंगला तथा अंग्रेज़ी, रशियन-आदि भाषाओं की रचनाओं के डोगरी में अनुवाद बड़ी तीव्र गति से किये जाने लगे। उनमें कई अनुवाद सीधे स्रोत भाषाओं से किये गए, जबकि हिन्दी तथा अंग्रेज़ी के माध्यम से लक्ष्य भाषा डोगरी में किये गए।

1964 ई० में जब जम्मू-कश्मीर कला, संस्कृति और भाषा अकादमी अस्तित्व में आई तो अंग्रेज़ी, उर्दू, हिन्दी और डोगरी आदि भाषाओं में एक ही सांझे 'शीराज़ा' नाम से त्रैमासिक पत्रिकाएं छपनी प्रारम्भ हुईं, इससे डोगरी रचनाओं को अनूदित होकर 'शीराज़ा' हिन्दी में छपने

के लिए अवसर प्राप्त होने लगे। इस प्रकार डोगरी की रचनाओं के हिन्दी में आने से 'शीराज़ा' पत्रिका में जब हिन्दी के बाहरी राज्यों के पाठक पढ़ने लगे तो उनकी प्रशंसा होने लगी। इससे ओम गोस्वामी जैसे कहानीकार उत्साहित होकर अपनी रचनाएं स्वयं अनूदित करके धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान तथा कमलेश्वर के संपादन में छपने वाली पत्रिका सारिका में भेजने लगे। परिणामतः डोगरी रचनाओं की प्रसिद्धी हिन्दी क्षेत्र में तेजी के साथ बढ़ने लगी। फिर देखा-देखी अन्य डोगरी लेखक भी या स्वयं अपनी रचनाओं के हिन्दी में अनुवाद करके या किसी मित्र आदि से करवाकर उपर्युक्त या अन्य पत्रिकाओं को प्रकाशनार्थ भेजने लगे। 1969-70 ई० में कमलेश्वर ने ओम गोस्वामी के साथ विचार-विमर्श करके सारिका का डोगरी कहानी अंक प्रकाशित करने की योजना बनाई जिसके लिए गोस्वामी जी ने गहरी सूझ से काम लेकर, डोगरी के निम्नलिखित कहानीकारों के साथ सम्पर्क करके, उनसे कहानियां लेकर और उनके स्वयं अनुवाद करके कमलेश्वर को भेजी, उनके नाम इस प्रकार है- नरेन्द्र खजूरिया, प्रो० मदन मोहन शर्मा, नरसिंह देव जमवाल, धर्म चन्द्र प्रशान्त तथा वेद राही आदि। अन्ततः जब वह अंक छपकर समाज के सामने आया तो पाठक वर्ग ने उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। विशेषकर हिन्दी का पाठक वर्ग तो बहुत ही प्रसन्न हुआ।

1986 ई० में जब ओम गोस्वामी का डोगरी कहानी संग्रह "सुने दी चिड़ी" साहित्य अकादेमी दिल्ली द्वारा पुरस्कृत किया गया था, तो उसके कुछ समय के बाद उक्त अकादेमी ने उस रचना 'सोने की चिड़िया' शीर्षक से हिन्दी में इस प्रकार रचना के मूल लेखक श्री गोस्वामी और उसके हिन्दी अनुवादक भी स्वयं गोस्वामी ही होने से अनुवाद हर दृष्टि से सराहनीय बन पड़ा है। इस संदर्भ में यह तथ्य भी ध्यातव्य है कि क्योंकि श्री गोस्वामी का जितना अधिकार अपनी मातृभाषा डोगरी पर है उतना ही राष्ट्रभाषा हिन्दी पर भी है। और फिर वह एक प्रतिष्ठित कहानीकार भी हैं, अतः जब स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा दोनों पर जिस लेखक का विश्वसनीय अधिकार भी हो और स्रोत भाषा में रचना करने तथा उसका लक्ष्य भाषा में अनुवाद करने वाला एक ही लेखक हो और रचना की विषय-वस्तु का भी वह विशेषज्ञ हो तो निश्चय वह अनुवाद होने पर सोने पर सुहागा के मुहावरे को चरितार्थ करता है। अब यहां मूल रचना से कुछ पंक्तियां उद्धृत करने के साथ-साथ उनका अनूदित रूप भी यहां प्रस्तुत किया जाता है-

(सुन्ने दी चिड़ी)-दोस्तो! ए क्हानी नेईं, इक कत्थ ऐ। तुस चाहो तां इसी लोक कत्थ लौ। पर लोक-कत्थ च राजे-रानियां, जादूगिर-परियां वगैरा हुन्दे न। इस कत्थै च ए सबभै नेईं ऐन। होने बी नेईं चाई दे, कीजे जिस दौर च अस ए गल्ल बयान करै करने आं, पृथ्वी पर जम्हूरियत दा दौर चलै करदा ऐ। बाकी ज़िकर उस्सै शै दा रौंह्दा ऐ, जेह्ड़ी स्थायी ऐ।

(पृ० 82)

अब इन पक्तियों का हिन्दी रूपान्तर भी द्रष्टव्य है-

"दोस्तो! यह कहानी नहीं, एक किस्सा है। आप चाहें तो इसे लोक-कथा कह लें। पर लोक-

कथा में राजे-रानियां, जादूगर, परियां बगैरह होते हैं। इस कथा में वे सब नहीं हैं। होने भी नहीं चाहिए, क्योंकि जिस दौर में हम यह दास्तान ब्यान कर रहे हैं, दुनिया में जम्हूरियत का दौर चल रहा है। बाकी जिक्र उसी शै का रहता है, जो टिकाऊ है, चिरस्थायी है। (पृ० 72)

यहां यह भी उल्लेख्य है कि गोस्वामी के डोगरी कहानी संग्रह 'सुन्ने दी चिड़ी' में सात कहानियां सम्मिलित हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं–मगरमच्छ, नुक्कर बछेरी ते लिङ्डी-खच्चर, सुन्ने दी चिड़ी, नर्कजून, म्हातमदारी, किंगरे आला चन्न, दद्दरी, जिन के अनूदित रूप इस प्रकार हैं–मगरमच्छ, लंगड़ी खच्चर, सोने की चिड़िया, अभिशप्त, मातम, आधा चांद और रिसती दाद।

कहानीकार गोस्वामी ने 1987 ई० डोगरी के प्रसिद्ध कहानीकारों की चुनिंदा कहानियों का हिन्दी में अनुवाद करके–'प्रतिनिधि डोगरी कहानियां,' शीर्षक से एक पाण्डुलिपि तैयार करके उसे सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली से प्रकाशित करवाया था। उस संग्रह में यह कहानियां सम्मिलित हैं–

मंगते दी चक्की	– भगवत् प्रसाद साठे
चैंचलो	– धर्म चन्द्र प्रशांत
बादल और बिजली	– प्रो० रामनाथ शास्त्री
पथरी	– मदन मोहन
तीतर	– नरेन्द्र खजूरिया
चीख	– वेदराही
जादू	– नरसिंह देव जम्वाल
लाम	– ओ०पी० शर्मा सारथी
पंछी	– बंधु शर्मा
स्मृति भंवर	– ओम गोस्वामी
लव पालिटिक्स	– चमन अरोरा
ठंड	– मनोज कुमार
उपजीवी	– ललित मगोत्रा
मंझली चाची	– कुंवर वियोगी

यद्यपि इन सभी कहानियों में से उदाहरण स्वरूप थोड़ी-थोड़ी पंक्तियां भी इस लेख की सीमा को ध्यान में रखकर उद्धृत नहीं की जा रही है, तो भी धर्मचन्द प्रशान्त की कहानी चैंचलो के डोगरी और हिन्दी में अनूदित दोनों रूपों की पंक्तियां यहां उद्धृत की जा रही हैं–

''ज्ञान ने दिक्खेआ अटक ठाठां मारदा जा करदा है। दरेया दियां भौड़ां जिस बेलै उप्पर उठदियां हीयां इंयां बझोंदा हा जे पानी दे निक्के पहाड़ रुड़दे जा करदे न। दरेया दा जल इन्ना ठंडा हा जे उस कन्ने छोइयै ब्हा ज्ञान गी बजदी ही उस कन्नै सरकण्डे निकली औंदे हे। पार ते रोआर किन्नै गै भुट्टे दरेया 'च रुड़दे आए दे पदमें दे मुण्ड पगड़ा करदे हे। इन्दे आस्ते बूंजी 'च ए बड़ी भारी कार ऐ। सारे दिने च अट्ठें-दस्सें आने दी मिनत ए खड़ी करी लैन्दे न'' (पृ० 79)

अब इनका हिन्दी रूपान्तर विचारणीय है-

''ज्ञान ने देखा दरिया ठाठें मार रहा है। ऊपर उठती और फिर बिछलती लहरें ऐसी लगती थीं मानो छोटे-छोटे टीले बहते जा रहे हों। पानी इतना ठंडा था कि उसे छूते ही ज्ञान के रोंगटे खड़े होने लगते। ऊपर से सर्द हवा के झोंके। नदी के दोनों ओर कितने ही भुट्टे पानी में बहते जा रहे पद्मो के तने पकड़ने में व्यस्त थे भुट्टो के लिए बूंजी में बहुत काम है। दिन भर काम करके ये अपनी गुजर के लिए आठ-दस आने कमा लेते हैं।'' इन उदाहरणों से पाठक स्वयं अनुमान लगा सकते हैं कि अनुवादक ओम गोस्वामी ने अनुवाद विधा के साथ कितना न्याय किया हुआ है।

इन चौदह कहानियों में से अधिकांश कहानियों का स्वयं हिन्दी में अुनवाद करके इस संग्रह में अभिव्यक्ति करके संपादन करने वाले गोस्वामी इसकी भूमिका में अनुवाद विधा या यों कहिए अनुवाद कला के बारे में अपने विचार बड़े निष्कपट भाव से अभिव्यक्त करते हुए कहते हैं- ''डोगरी कहानियों के कुछेक अनुवाद कभी-कभार विभिन्न हिन्दी पत्रिकाओं के लिए किये जाते रहे हैं, लेकिन यह भावना बड़ी प्रबल रही है कि कहानी की जो शक्ति मूल पाठ में निहित थी, वह अनुवाद में बेहद क्षीण पड़ गई। इसका मूल कारण यह रहा है कि जिन लोगों ने अनुवाद किये वे न सिर्फ डोगरी के स्वभाव से अपरिचित थे, बल्कि डोगरी से उनका विशेष ताल्लुक-वास्ता भी न था। अनुवाद का मुख्य उद्देश्य न केवल मूल रचना के ढांचे को बनाये रखना होता है, इसकी आत्मा को जीवित बनाये रखने का अध्यवसाय करना भी होता है।''

स्पष्ट है कि ओम गोस्वामी ने अपने विचार अनुवाद के संदर्भ बड़ी दयानतदारी से अभिव्यक्त किए हैं।

लगभग 15 वर्ष पहले साहित्य अकादेमी दिल्ली ने अपने उपसचिव ब्रजेद्र त्रिपाठी के नेतृत्व मे जम्मू में एक डोगरी कविता हिन्दी कविता के अनुवाद पांच दिवसीय कार्यशाला आयोजित करवाई थी। उस समय के साहित्य अकादेमी डोगरी भाषा के संयोजक डॉ० ओम गोस्वामी उस कार्यशाला के अध्यक्ष थे और मुझे उनके साथ सहयोगी की भूमिका निभाने को कहा गया था। उस कार्यशाला में भाग लेने कवि/साहित्यकार/अनुवादक थे- डॉ० जितेन्द्र उधमपुरी, डॉ० अशोक जेरथ, मनसा राम चन्चल, श्याम रैणा तथा बृजमोहन आदि। खेद कि बात है

कि पुस्तकाकार में प्रकाशित वह रचना आज तक भी हमें प्राप्त नहीं हुई है।

2008 ई० में दिल्ली से प्रकाशित होने वाली त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका-शब्द योग के प्रधान संपादक सुभाष पन्त ने अतिथि संपादक नितिन ठाकुर और प्रो० ललित मगोत्रा के सहयोग से उक्त पत्रिका का एक डोगरी कहानी/कविता विशेषांक प्रकाशित किया था, जिसके एक भाग में 20 अनूदित कहानियां सम्मिलित की गई हैं और दूसरे में 21 अनूदित कविताएं हैं। यहां कुछ कहानीकारों और कवियों के नाम दिये जा रहे हैं-

कहानीकार

1. नरेन्द्र खजूरिया
2. बंधु शर्मा
3. धर्मचन्द प्रशांत
4. रत्न केसर
5. वेदराही
6. डॉ० मनोज
7. प्रो० ललित मगोत्रा
8. चमन अरोरा
9. नरसिंह देव जमवाल
10. प्रो. मदन मोहन
11. राज राही
12. प्रो० रामनाथ शास्त्री इत्यादि

कवि

1. प्रो० रामनाथ शास्त्री
2. वेद राही
3. वीरेन्द्र केसर
4. जितेन्द्र उधमपुरी
5. दर्शन दर्शी
6. विजया ठाकुरा
7. नरसिंह देव जमवाल
8. राम लाल शर्मा
9. ज्ञानेश्वर
10. पद्मा सचदेव
11. शशि पठानिया इत्यादि

2008 ई० में ओम विद्यार्थी की रचना 'त्रिप त्रिप चेते' जिसे कुछ वर्ष पूर्व साहित्य अकादेमी ने पुरस्कृत किया था, का इन पंक्तियों के लेखक द्वारा हिन्दी में 'बूंद-बूंद स्मृतियां' शीर्षक से अनुवाद करवाया था, जिसका प्रकाशन 2009 ई० में किया गया था। इसमें से स्रोत भाषा डोगरी गद्यांश और लक्ष्य भाषा हिन्दी में उसके अनूदित रूपों को यहां उदाहरण के लिए प्रस्तुत किया जाता है-

(दौं दिन मानसरै कंढै)-26 फरवरी 1991 भी चानक गै मानसर जाने दा मनमिद मेरी जीवन-साथना गी चढ़ेआ तां अस दमें जारां-चाली आली बस्सा च बेही गे। चाली किलो मीटर जम्मू पठानकोट सिड़कै पर जाइयै साम्बै दा साढ़ी बस्स बक्खरी सिड़का पर पेई गेई। बिंद भर पद्दरै द्रौड़ियै बस्स सरपड़ियै दे घूमैं अपना साह् चाढ़न लगी ते फ्ही चीड़ैं दे जाड़ पुज्जी। चीड़ै दे बुंगे खिल्लरी-खिल्लरी जारदे हे, कनकू दे खुम्बे-केयालुयैं कन्नै भरोचे दे

हे ते कुतै-कुतै आढ़ीं-ढेफैं पर पीले-पीले बसन्त आप मुहारे खिड़दे, असेंई अपनी काढ़ दस्सी जारदे हे। (पृ० 29)

हिन्दी रूपान्तर– 26 फरवरी 1991, अचानक मेरी अर्द्धांगिनी को मानसर जाने की प्रबल इच्छा हुई। मैंने उसकी इच्छा का सम्मान करते हुए झट अपनी स्वीकृति ही नहीं दी अपितु शीघ्र ही चलने की तैयारी करके हम दिन के ग्यारह बजकर चालीस मिनट पर जाने वाली बस में जा बैठे।

जम्मू से चालीस किलोमीटर की दूरी पर सांबा से दो किलोमीटर पहले राष्ट्रीय राज मार्ग की ओर जाने वाली दिशा से अलग दिशा की ओर हमारी बस आगे बढ़ चली। कुछ किलोमीटर मैदानी सड़क पर दौड़ने के बाद हमारी बस चट्टानों के घुमावदार रास्ते से अपनी सांसें फुलाने लगी और पहुंच गई चीड़ वृक्षों के जंगल में। वहां चीड़ के पेड़ों के नीचे गिरे हुए सूखे चलैंत्तर (चीड़े के अपने ढंग के पत्ते जो आगे से सूई की नोक की तरह होते हैं) के गुच्छे गेंहू के खेतों में हाल ही में फूले हुए कचालू-फूलों के साथ उलझे हुए बड़े सुहावने लग रहे थे। कहीं-कहीं खेतों की मेड़ों पर बसंत के पीले-पीले फूल बेतहाशा खिले हुए हमें अपने आकर्षक सौन्दर्य से लुभा रहे थे। (पृ. 36)

यहां यह कहते हुए मुझे हर्ष होता है कि मेरी इस अनूदित रचना 'बूंद-बूंद स्मृतियां' को उत्कृष्ट अनूदित रचना सिद्ध करते हुए केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय दिल्ली ने एक लाख रुपयों की राशि से पुरस्कृत किया है।

कुछ महीने पहले मैंने श्री मति कृष्णा प्रेम के कहानी संग्रह में सम्मिलित एक कहानी 'दिर तुम्हारी' का हिन्दी में 'धिक् तुम्हारी' शीर्षक से अनुवाद करके केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की पत्रिका भाषा में प्रकाशित करने के लिए भेजा था, जिसे निदेशालय उपनिदेशक डॉ० वी.प्र० निदारिया ने मुझे फोन द्वारा सूचित किया था कि कहानी भाषा पत्रिका के लिए स्वीकृत कर ली गई है। उस कहानी के मूल और अनूदित दोनों रूपों के कुछ अंश यहां प्रस्तुत हैं-

'एह्दा कोई नेईं। एह् इक्कला गै रौंह्दा ऐ। 19 ब'रै पैहलें एह्दा ब्याह् होआ हा। दूर परली बक्खी खब्बै प्हाड़ा दी उप्परली धारा दे कुसै माऊ नांऽ दी जनानी ने एहदा ब्याह् अपनी धीऊ कन्नै कराया हा। इक्कले माह्नुऐ गी जेह्दा अगला-पिछला कोई नेईं हा, बसदे घरे दी कुड़ी कु'न दिंदा ? ओह् लौह्की बरेसा दी इक्कली गै धीऽ ही माऊ दी रज्जियै गरीबी ते बमारी माऊ गी तौले गै स'ली गेई। (पृ 14-15)

अब इसका 'धिक तुम्हारी' शीषक से अनूदित पंक्तियों का रूप भी दृष्टव्य है-

इसका कोई नहीं है। यह अकेला ही रहता है। लगभग बीस वर्ष पहले इसका विवाह हुआ था। बहुत दूर उस पार बाईं ओर पहाड़ की ऊपरी तराई में रहने वाली किसी माऊ नामक महिला ने इसका विवाह अपनी बेटी के साथ करवाया था। ऐसे अकेले व्यक्ति को, जिसके

आगे-पीछे कोई भी भाई-बन्धु और सम्बन्धी न हो, उसे भला कौन भरे-पूरे परिवार वाला व्यक्ति अपनी बेटी देने को तैयार हो सकता है। छोटी आयु की वह बेचारी अपने माता-पिता की एक मात्र सन्तान थी। एक तो हृदय दहला देने वाली गरीबी और दूसरा असाध्य रोग माऊ के प्राण लेकर ही मुक्त हुआ था।'' (पृ० 3)

ऊपर दिए गए सर्वेक्षण से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि डोगरी की स्तरीय रचनाओं के हिन्दी में अनुवाद भले ही 70 के – दशक में ही किये जाने आरम्भ हुए, परन्तु प्रारम्भ में गति बड़ी धीमी इसलिए रही क्योंकि डोगरी में साहित्यिक रचना की अवस्था उस समय तक अभी अपनी बाल्यावस्था से ही गुजर रही थी। उसके बाद ज्यों-ज्यों डोगरी लेखन ने गति पकड़ी और जो कहानियां और कविताएं हिन्दी में अनूदित होकर हिन्दी की पत्रिकाओं आदि में छप रही थीं, उनके कारण हिन्दी पत्रिकाओं के संपादकों ने भी और पाठक वर्ग ने भी अधिक से अधिक अनूदित रचनाओं की मांग करनी आरम्भ कर दी थी। परिणामत: डोगरी से हिन्दी में अनुवाद करने के लिए जो साहित्यकार सक्षम थे उन्होंने अपनी सामर्थ्यानुसार – अनुवाद करने आरम्भ कर दिये। वे लोग अपनी अनूदित रचनाएं बाहिर भी भेजने लगे और जम्मू-कश्मीर कला, संस्कृति और भाषा अकादमी की पत्रिका 'शीराज़ा' में भी छपने लगे। इसके अतिरिक्त साहित्य अकादमी दिल्ली भी समय-समय पर डोगरी की विभिन्न रचनाओं के हिन्दी में अनुवाद कार्य को बड़ी तेजी से प्रोत्साहित कर रही है। परन्तु इसके बावजूद अभी तक भी डोगरी रचनाओं के हिन्दी में बहुत कम अनुवाद हुए हैं– जबकि डोगरी भाषा के 22 दिसम्बर 2003 में भारतीय संविधान के आठवें अनुच्छेद में सम्मिलित हो जाने से डोगरी रचनाओं के हिन्दी में अनुवाद की बड़ी तेजी से मांग बढ़ रही है। इन पंक्तियों के लेखक को जब कई बार हिन्दी सम्मेलनों में सम्मिलित होने के लिए देश के विभिन्न प्रदेशों में जाने का अवसर मिलता है तो उनमें सम्मिलित होने वाले कई विद्वान् डोगरी की हिन्दी में अनूदित रचनाओं की मांग करते हैं। उनका प्राय: यह कहना होता है कि वे जानना चाहेंगे कि डोगरी में कैसा साहित्य लिखा/रचा जा रहा है। इससे यह तथ्य सामने आता है कि इस वैश्वीकरण या बाजारवाद के दौर में जब दुनिया भर के राष्ट्रों के लोग एक-दूसरे के समीप आना चाहते हैं तो ऐसे समय में भाषाओं की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाती है। ऐसी स्थिति में अंग्रेज़ी भले ही विश्व के अधिक राष्ट्रों के मध्य एक सम्पर्क भाषा के रूप में अपनी अग्रणी भूमिका निभाने का दावा कर सकती है, परन्तु हिन्दी भी ज्यों-ज्यों अपने कदम विश्व भाषा बनने की दिशा की ओर बढ़ रही है तो इसकी भी महत्वूपर्ण भूमिका निभाने जाने की सम्भावना निरन्तर बढ़ती जा रही हैं। ऐसी स्थिति में हिन्दी में शेष भाषाओं की रचनाओं के साथ-साथ डोगरी की रचनाओं के भी अधिक से अधिक अनुवाद किये जाने की चुनौतियां सामने प्रतीत हो रही हैं। इनका समाधान अधिक से अधिक इस भाषा की रचनाओं के हिन्दी में अनुवाद करवाए जाने या किये जाने के कारण ही हो सकता है।